चित्तवृत्तिनिरोधक योग से वेदनाओं का अवर्तन सम्भव

(म.म. राष्ट्रपति-सम्मानित) प्रो. वैद्य बनवारी लाल गौड़
पूर्व निदेशक - राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान जयपुर
पूर्व कुलपति - डॉ. एस.आर. राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय जोधपुर
एवं
डॉ. विश्वावसु गौड
बी.ए.एम. एस. (आयुर्वेदाचार्य)
आयुर्वेद-वाचस्पति (एम.डी. आयुर्वेद) असिस्टेंट प्रोफेसर, स्वस्थवृत्त विभाग
एम.जे.एफ. आयुर्वेद महाविद्यालय हाड़ोता, चौमूँ, जयपुर (राजस्थान)

प्रमाण-विपर्यय-विकल्प-निद्रा-स्मृतयः॥ (योगसूत्र 1/6)

अर्थात् प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति – ये पाँच चित्त की वृत्तियाँ हैं।

1. **प्रमाण** –

प्रमाण वह वृत्ति है जिससे यथार्थ ज्ञान उत्पन्न होता है। यह तीन प्रकार से प्राप्त होता है-

- **प्रत्यक्ष (Direct Perception)**
- **अनुमान (Inference)**
- **आगम (Scriptural testimony or reliable authority)**

प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि॥ (योगसूत्र 1.7:)

- इन्द्रियों द्वारा किसी वस्तु का प्रत्यक्ष अनुभव। जैसे- सूर्य को आकाश में चमकता हुआ देखते हैं यह प्रत्यक्ष ज्ञान है।

- किसी ज्ञात लक्षण के आधार पर, अदृष्ट वस्तु का ज्ञान होना अनुमान है। जैसे- जहाँ -जहाँ धुआँ है, वहाँ - वहाँ आग भी अवश्य होती है।

- योग्य, विश्वसनीय व्यक्ति (ऋषि, शास्त्र, गुरु आदि) के कथन के आधार पर प्राप्त ज्ञान आगम या आप्तोपदेश प्रमाण है। जैसे- शास्त्रों से यह ज्ञान प्राप्त होता है कि पुनर्जन्म होता है , यह प्रत्यक्ष या अनुमान से नहीं जाना जा सकता, परन्तु शास्त्र या गुरु के वचनों से जाना जाता है। (वेदों में बताया गया है कि आत्मा अमर है।)

2. विपर्यय –

विपर्यय वह वृत्ति है जिससे असत्य या मिथ्या ज्ञान (अयथार्थ ज्ञान) उत्पन्न होता है, जो वस्तु के स्वरूप के विपरीत होता है।

विपर्ययो मिथ्याज्ञानम् अतद्रूपप्रतिष्ठम्।। (योगसूत्र 1/8)

अर्थात् विपर्यय वह मिथ्या ज्ञान है जो वस्तु के वास्तविक रूप के विपरीत होता है। जैसे- मृगतृष्णा में रेगिस्तान को जलयुक्त देखना।

3. विकल्प –

विकल्प वह वृत्ति है जो किसी वस्तु का नाम लेकर उसके वास्तविकता के विना ही कल्पना की जाती है ।

शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः।। (योगसूत्र 1/9)

अर्थात् जो केवल शब्दज्ञान पर आधारित हो और जिसका कोई वस्तुरूप अस्तित्व न हो, वह विकल्प है (कल्पनात्मक ज्ञान) । जैसे- आकाशकुसुम (आकाश में फूल), जिसकी कोई सच्चाई नहीं।

4. निद्रा –

निद्रा वह अवस्था है जिसमें चित्त केवल अभाव का अनुभव करता है।

अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्राः।। (योगसूत्र 1/10)

अर्थात् जो वृत्ति अभाव के ज्ञान पर आधारित हो, वह निद्रा है। निद्रा केवल जड़ अवस्था नहीं है, यह भी एक चित्तवृत्ति है, क्योंकि जागने पर व्यक्ति कहता है कि “मैं सोया था।”

5. स्मृति –

स्मृति वह वृत्ति है जो अनुभव की गई वस्तुओं को पुनः चित्त में उपस्थित करती है।

अनुभूतविषयासम्प्रमोषः स्मृतिः॥ (योगसूत्र 1/11)

अर्थात् अनुभूत विषय का लोप नहीं होना स्मृति है। जैसे- पूर्व जन्म या बाल्यकाल की घटना का स्मरण होना।

चित्तवृत्तियाँ और आयुर्वेद-

1. प्रमाण और बुद्धि-

आयुर्वेद में प्रमाण अर्थात् यथार्थ ज्ञान को धृति, स्मृति, बुद्धि इत्यादि की शुद्धता पर आधारित माना गया है।

तत्त्वज्ञाने स्मृतिर्यस्य रजोमोहावृतात्मनः|
भ्रश्यते स स्मृतिभ्रंशः स्मर्तव्यं हि स्मृतौ स्थितम्|| (च.शा.1/101)

जिस व्यक्ति की आत्मा रजोगुण और मोह से आच्छन्न (आवृत) हो जाती है, उसकी तत्त्वज्ञान में स्थित स्मृति (आध्यात्मिक स्मरणशक्ति) भ्रष्ट हो जाती है वह स्मृतिभ्रंश है (और जब स्मृति भ्रष्ट हो जाती है, तब वह व्यक्ति उन तत्त्वों को भी भूल जाता है जिन्हें स्मरण रखना चाहिए), स्मृति में स्थित भाव या तत्त्व स्मरण रखने के योग्य होते हैं।

यह प्रमाणवृत्ति विशेषतः अनुमान और आगम पर आधारित निर्णयक्षमता और बुद्धि की विशुद्धता से जुड़ी है। अतः आयुर्वेदीय दृष्टिकोण में प्रमाणवृत्ति बुद्धिस्थ विवेक का कार्य है।

2. विपर्यय और प्रज्ञापराध (Intellectual Error)

विपर्यय वह वृत्ति है जो मिथ्या ज्ञान उत्पन्न करती है। आयुर्वेद में इस स्थिति को प्रज्ञापराध माना गया है –

धीधृतिस्मृतिविभ्रष्टः कर्म यत् कुरुतेऽशुभम्|
प्रज्ञापराधं तं विद्यात् सर्वदोषप्रकोपणम्|| (च.शा.1/102)

जो मनुष्य बुद्धि, धृति और स्मृति से च्युत होकर अशुभ (हानिकारक या अनुचित) कर्म करता है, उसे 'प्रज्ञापराध' कहा गया है; और उस प्रज्ञापराध को सभी दोषों (शारीरिक, मानसिक विकारों) को प्रकुपित करने वाला जानना चहिये।

धृति को 'नियमात्मिका' (नियन्त्रण में रखने वाली) इसलिए कहा गया है क्योंकि वह अपने स्वभाव से ही मन को अकरणीय (जो नहीं करना चाहिए) कार्यों में प्रवृत्त होने से रोकती है। इस कारण जब धृति मन को संयमित करने में असमर्थ हो जाती है, तब वह (धृति) अपने कर्तव्य से च्युत हो जाती है, यही इस सूत्र का तात्पर्य है।

यह वाक्य धृति (धैर्य, मानसिक स्थिरता) की भूमिका स्पष्ट करता है। धृति का स्वभाव यह है कि वह मन को अनुचित कर्मों से रोकती है और संयम में रखती है। लेकिन जब मन नियंत्रण में नहीं रहता और अनुचित कर्मों की ओर चल पड़ता है, तो यह माना जाता है कि धृति अपने धर्म से च्युत हो गई है अर्थात् वह अपनी नियामक भूमिका निभाने में असफल रही है।

यह कथन अध्यात्म, योग और आयुर्वेद के दृष्टिकोण से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, जहाँ मानसिक अनुशासन को स्वास्थ्य और धर्म के पालन की मूल धुरी माना गया है। अतः विपर्यय वृत्ति दोषयुक्त प्रज्ञा (प्रज्ञापराध) है।

3. विकल्प और विकृति-

विकल्प अर्थात् वस्तुशून्य कल्पना, आयुर्वेदिक दृष्टि से रजोगुण का उत्पाद है। अर्थात् मन की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ ही इसकी विकल्पशीलता हैं। अत्यधिक विकल्पधर्मिता चित्त को भ्रमित करती है। आयुर्वेद में यह मन की चपलता, रजोगुण और अविकसित विवेक से जुड़ी होती है।

4. निद्रा और तमोगुण-

निद्रा वृत्ति आयुर्वेद में तमोगुण का स्वाभाविक फल है।

तमोभवा श्लेष्मसमुद्भवा च मनःशरीरश्रमसम्भवा च|
आगन्तुकी व्याध्यनुवर्तिनी च रात्रिस्वभावप्रभवा च निद्रा|| (चरकसंहिता सू. 21.58):

अर्थात् निद्रा को ६ प्रकार का निर्दिष्ट किया गया है, यथा-

निद्रा (नींद) तामसिक प्रकृति से उत्पन्न होती है, कफदोष से उत्पन्न होती है, मन और शरीर की थकान से

उत्पन्न होती है, कभी-कभी आगंतुक कारणों से भी उत्पन्न होती है, कुछ रोगों के पीछे-पीछे चलने वाली (सहगामी) होती है (अर्थात कुछ व्याधियों में निद्रा एक लक्षण के रूप में होती है), और रात्रि के स्वाभाविक प्रभाव से भी उत्पन्न होती है।

यह ६ प्रकार की निद्रा हैं लेकिन इन सभी में तमोदोष सम्पृक्त रहता है । स्वाभाविक निद्रा स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है, परन्तु अज्ञानात्मक निद्रा या प्रमाद योगमार्ग में बाधक है।

पतञ्जलि और चरक-

कुछ विद्वान् पतञ्जलि एवं चरक को एक ही मानते हैं, यह पृथक् से विवेचन के योग्य विषय है| यहां तो केवल इतना ही विचारणीय विषय है कि पतञ्जलि का चित्तवृत्तिनिरोध और चरकसंहिता की मनोचिकित्सीय अवधारणाएँ एक-दूसरे की पूरक हैं।

- जहाँ योग शुद्ध मन, बुद्धि और चित्त के एकाग्र संयम को लक्ष्य करता है,
- वहीं आयुर्वेद इस चित्त की शुद्धता को स्वास्थ्य का अनिवार्य अंग मानता है।

आयुर्वेद में 'सत्त्वावजयचिकित्सा' और योग में 'अष्टाङ्गमार्ग' इन दोनों का अंतिम लक्ष्य चित्त को वृत्तिरहित, संतुलित, स्मृतिमान् और आत्मदर्शी बनाना है।

चरकसंहिता में योग की अवधारणा:

चरकसंहिता आयुर्वेद का एक प्रमुख ग्रन्थ है, इसमें चित्तशुद्धि, आत्मज्ञान और मनोनिग्रह जैसे विषयों पर गहन विवेचन किया गया है। योग के परिणाम और उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए आचार्य चरक कहते हैं कि-

योगे मोक्षे च सर्वासां वेदनानामवर्तनम् ।
मोक्षे निवृत्तिर्निःशेषा योगो मोक्षप्रवर्तकः॥ (च.शा. 1/137)

अर्थात् योग में तथा मोक्ष में सभी प्रकार की वेदनाओं (दुःखों) का न होना (अवर्तन) होता है। मोक्ष प्राप्ति के बाद उन सभी वेदनाओं से पूर्ण निवृत्ति होती है जबकि योग मोक्ष का प्रवर्तक होता है ।

इसका तात्पर्य यह है कि अष्टाङ्ग योग की साधना करते समय भी दुःख की निवृत्ति होती है लेकिन वह

अस्थाई होती है तथा इसके माध्यम से यदि मोक्ष की प्राप्ति होती है तो मोक्ष में सभी वेदनाओं की निवृत्ति निःशेष रूप से (समूल रूप से) हो जाती हैं। इससे यह सङ्केतित होता है कि योग में वेदनाओं की निवृत्ति अस्थाई होती है इस सम्बन्ध में चक्रपाणि कहते हैं कि-

मोक्ष आत्यन्तिकशरीराद्युच्छेदः। निःशेषेति न पुनर्भवति| एतेन, योगे निवृत्ता वेदना पुनर्भवतीति सूचयति। मोक्षप्रवर्तक इति मोक्षकारणम्। (चरक. शारीर. १/ १३७ चक्रपाणि)

अर्थात् मोक्ष का अर्थ है "शरीर आदि का पूर्णतः नाश" (आत्यन्तिक उच्छेद)। 'निःशेष' का तात्पर्य है — ऐसी वेदनायें जिनमें कुछ भी शेष न रहे, अर्थात् वे पुनः नहीं होती। इससे यह सङ्केत मिलता है कि योग के कारण वेदनाएँ (दुःख आदि) निवृत्त तो हो जाती हैं, लेकिन वे पुनः हो जाती हैं। मोक्षप्रवर्तक का तात्पर्य है मोक्ष का कारण। (मोक्ष ही ऐसा है जो पूर्ण रूप से वेदनाओं को समाप्त कर देता है, इसलिए योग तो केवल मोक्ष को प्राप्त करने वाला ही होता है)।

श्रीमद्भगवद्गीता में चित्तवृत्तिनिरोधः-

श्रीमद्भगवद्गीता में योग की जो परिभाषा मिलती है, वह भी चित्त की समत्व अवस्था को ही सर्वोपरि मानती है:

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥ (श्रीमद्भगवद्गीता 2/48)

अर्थात् हे धनञ्जय! फल की आसक्ति को त्याग कर सिद्धि और असिद्धि में सम हो कर (निष्पक्ष हो कर) योग में स्थित हुये (तुम) कर्मों को करो। (क्योंकि) समत्व को ही योग कहा जाता है। (यह समत्व "चित्त की तटस्थता" ही चित्तवृत्तियों का निरोध है।

चरकसंहिता में चित्तवृत्तिनिरोधक उपाय-

एतत्तदेकमयनं मुक्तैर्मोक्षस्य दर्शितम्।
तत्त्वस्मृतिबलं, येन गता न पुनरागताः॥ (च.शा.1/150)

अर्थात् यह (तत्त्वज्ञानयुक्त) एकमात्र मार्ग (अयन) है जिसे मुक्त योगियों (जीवन्मुक्त योगियों) ने मोक्ष का

वास्तविक पथ बताया है। यह मार्ग तत्त्व की स्मृति (स्मरण) के बल से युक्त है, जिसके माध्यम से जो आत्माएँ चली गईं, वे फिर कभी (संसार में) लौटकर नहीं आईं (अपुनर्भव प्राप्त हो गया)।

निष्कर्ष-

वर्तमान युग में विभिन्न कारणों से मानसिक तनाव, चिन्ता, अवसाद की वृद्धि तथा धैर्य के अभाव को देखते हुए, चित्तवृत्तिनिरोधक योग को अपनाना समय की आवश्यकता है। यह न केवल चिकित्सा की दृष्टि से लाभप्रद है, अपितु जीवन के आध्यात्मिक, सामाजिक एवं व्यावसायिक क्षेत्रों में भी सन्तुलन प्रदान करता है। अतः चित्तवृत्तिनिरोधक योग के केवल प्रारम्भ करने मात्र को केवल साधना नहीं, अपितु जीवन की अनिवार्य आवश्यकता मानना श्रेष्ठ होगा।

आयुर्वेद कहता है कि रजोगुण और तमोगुण की वृद्धि चित्त को अशान्त करती है, जिससे भय, मोह, राग, द्वेष आदि उत्पन्न होते हैं। जबकि योगाभ्यास से सत्त्वगुण की वृद्धि होती है, जिससे श्रद्धा, शान्ति, सन्तोष, स्मृति और समाधि की स्थिति उत्पन्न होती है। चरकसंहिता के अनुसार शारीरिक मानसिक रोगों का मूल कारण 'प्रज्ञापराध' है अर्थात् बुद्धि और चित्त का अपविकसित अथवा दोषपूर्ण प्रयोग।

चित्तवृत्ति के निरोध की सम्पूर्णता को प्राप्त करना सबके वश की बात नहीं है फिर भी योग की प्रक्रिया को प्रारम्भ कर लेना भी मन के दुर्गुणों की निवृत्ति की ओर बढने का एक साङ्केतिक प्रयास है। निश्चित रूप से इसके कारण सात्त्विक भावों का उद्रेक और राजसिक तथा तामसिक भावों की निवृत्ति का प्रारम्भ होना भी एक शुभ सङ्केत है तथा परिणामस्वरूप भविष्य में मङ्गल की प्राप्ति के लिए आशा का भाव जागृत करता है। इसलिए उपनिषत्, चरकसंहिता एवं योगसूत्र में बताए गए यम-नियम आदि का परिपालन तथा सद्वृत्त और आचाररसायन की परिपालना निश्चित रूप से चित्त की वृत्तियों के निरोध की और ले जाने वाले मार्ग को प्रशस्त करते हैं ।

अतः जो योग करते हैं वे शुभ फल की प्राप्ति का प्रयास कर रहे हैं और जिन्होंने योग अभी प्रारम्भ नहीं किया है उन्हें इस मङ्गलकारी प्रवृत्ति की ओर बढ़ने के लिए भी यह 21 जून का अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस आमन्त्रित करता है और प्रोत्साहित भी करता है, अतः जन-जन को योग करने की प्रवृत्ति अपने आप में विकसित करनी ही चाहिए, क्योंकि चित्तवृत्तिनिरोधक योग से वेदनाओं का अवर्तन सम्भव है।

सन्दर्भ ग्रन्थ-

1. पातञ्जलयोगसूत्र
2. श्रीमद्भगवद्गीता
3. कठोपनिषद्
4. चरकसंहिता (प्रथमखण्ड) – सान्वया हिन्द्यनुवादसहिता च, आयुर्वेददीपिकाव्याख्योपेता (एषणा-व्याख्यासहिता), प्रमुख-अन्वेषक और अनुवादक- प्रो. वैद्य बनवारी लाल गौड, राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ दिल्ली द्वारा प्रकाशित
5. चरकसंहिता (द्वितीय खण्ड) – सान्वया हिन्द्यनुवादसहिता च, आयुर्वेददीपिकाव्याख्योपेता (एषणा-व्याख्यासहिता), प्रमुख-अन्वेषक और अनुवादक- प्रो. वैद्य बनवारी लाल गौड, राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ दिल्ली द्वारा प्रकाशित
6. चरकसंहिता (तृतीय खण्ड) – सान्वया हिन्द्यनुवादसहिता च, आयुर्वेददीपिकाव्याख्योपेता (एषणा-व्याख्यासहिता), प्रमुख-अन्वेषक और अनुवादक- प्रो. वैद्य बनवारी लाल गौड, राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ दिल्ली द्वारा प्रकाशित
7. अष्टाङ्गहृदयम्, सूत्रस्थानम् – डॉ. विश्वावसु गौड़ द्वारा अनूदित, चौखम्भा ओरियण्टालिया, वाराणसी द्वारा प्रकाशित
8. स्वस्थवृत्त-विवेचन – लेखक: प्रो. बनवारीलाल गौड़ एवं डॉ. विश्वावसु गौड़, साक्षी पब्लिशिंग हाउस, जयपुर द्वारा प्रकाशित
9. अमरकोश – रामाश्रमी टीकासहित
10. संस्कृत-हिन्दी शब्दकोश – आप्टे
11. सांख्यकारिका (ईश्वरकृष्णकृत)
12. हठयोगप्रदीपिका – स्वात्मारामकृत
13. वेदान्तसार (सदानन्दकृत)

◆◆◆